प्रतिवेद्य

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

रिट याचिका (सिविल) सं. 3043/1991

निर्णय की तिथि: 23 जुलाई, 2008

आसुलाल लोया .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री नरोत्तम व्यास, अधिवक्ता।

बनाम

भारत संघ और अन्य .....प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री ए.के. वर्मा, प्रत्यर्थीगण 2 और 3 के लिए अधिवक्ता।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री संजीव खन्ना

1. क्या स्थानीय समाचार पत्र के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?

2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं? हाँ

3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

न्या. संजीव खन्ना:

1. प्रत्यर्थी-भारत एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड अब भारत सरकार का उपक्रम नहीं है और दिनांक 2 मार्च, 2001 के एक त्रिपक्षीय शेयर क्रय अनुबंध के अनुसरण में इसका निजीकरण कर दिया गया था। याचिकाकर्ता श्री असुलाल लोया ने दिनांक 28 सितंबर, 1991 को प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा सेवा समाप्त करने के उसके आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान रिट याचिका दायर की थी। प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा एक प्रारंभिक मुद्दा उठाया गया है कि वर्तमान रिट याचिका अब संधार्य नहीं है और प्रत्यर्थी कंपनी के विरुद्ध कोई राहत नहीं दी जा सकती है क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अंतर्गत "राज्य" या "अन्य प्राधिकरण" नहीं है। दूसरी ओर, याचिकाकर्ता का प्रतिवाद है कि जब रिट याचिका मूल रूप से प्रत्यर्थी कंपनी के विरुद्ध दायर की गई थी तो वह संधार्य थी और इतने वर्षों के पश्चात् याचिकाकर्ता का "वाद खारिज करना" अन्यायपूर्ण और अनुचित होगा। यह भी कथित है कि मुकदमेबाज़ी का सामान्य नियम यह है कि पक्षकारगण के अधिकार मुकदमेबाज़ी शुरू होने की तिथि को निश्चित हो जाते हैं और राहत के अधिकार का निर्णय उस तिथि के संदर्भ में किया जाना चाहिए जिस दिन याचिकाकर्ता ने न्यायालय का दरवाज़ा खटखटाया था। यह सिद्धांत उच्चतम न्यायालय द्वारा ***बेग राज सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,*** जे.टी. 2002 (10) एस.सी. 417, में प्रतिवेदित किए गए के मामले में लागू किया गया था, जिसमें निम्नानुसार टिप्पणी की गई थी:-

> "एक याचिकाकर्ता, हालाँकि विधि में राहत पाने का हकदार है, फिर भी बाद की या बीच की घटनाओं, अर्थात् मुकदमे की शुरुआत और निर्णय की तिथि के बीच की घटनाओं के कारण इक्विटी में राहत से वंचित किया जा सकता है। याचिकाकर्ता जिस राहत का हकदार है, वह समय बीतने के कारण निरर्थक हो सकती है या विधि में बदलाव के कारण उसे प्रदान करने में असमर्थ हो सकता है। ऐसी अन्य परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं जो निर्णय की तिथि पर इक्विटी के विरुद्ध असमानताओं को तौलने पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध झुके होने के कारण प्रत्यर्थीगण पर याचिकाकर्ता को कोई राहत प्रदान करना अनुचित बनाती हैं।"

2. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता को कोई राहत दी जा सकती है यदि निर्णय सुनाए जाने के समय मुकदमे में प्रत्यर्थी भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में राज्य नहीं है। मैं यहाँ यह उल्लेख करूँगा कि संविधान का अनुच्छेद 367 यह निर्धारित करता है कि संविधान की व्याख्या के लिए सामान्य खंड अधिनियम, 1872 के उपबंध लागू किए जा सकते हैं। हालाँकि, सामान्य खंड अधिनियम की धारा 6, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि भारत के संविधान पर लागू नहीं है। *ए.आई.आर. 1951 इलाहाबाद 703 में प्रतिवेदित* ***सेठ जगमंदर दास और अन्य बनाम राज्य*** में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि धारा 6 वहाँ लागू होती है जहाँ किसी केंद्रीय अधिनियम या विनियमन को निरस्त किया जाता है। भारत का संविधान एक केंद्रीय अधिनियम या विनियमन नहीं है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय और इस संबंध में की गई

टिप्पणियों को उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा उक्त निर्णय के विरुद्ध दायर अपील में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया था, जिसका शीर्षक ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सेठ जगमंदर दास*** था, जिसे *ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 683 में प्रकाशित* किया गया था। इसके अतिरिक्त, आम तौर पर अपूर्ण अधिकार जो परिपक्व नहीं हुए हैं, वे अस्तित्व में नहीं रहते हैं। केवल आशा या अपेक्षा से कोई अधिकार प्रदत्त नहीं किया जाता है।

3. यह बात पूरी तरह से स्थापित है कि एक निजी लिमिटेड कंपनी या एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के विरुद्ध रिट याचिका संधार्य नहीं है, जिसमें राज्य का व्यापक नियंत्रण नहीं है। *(2005) 6 एससीसी 657 में प्रतिवेदित* ***बिन्नी लिमिटेड और अन्य बनाम वी. सदाशिवन और अन्य,*** में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत एक रिट याचिका आम तौर पर सार्वजनिक प्राधिकरणों के विरुद्ध जारी की जाती है और निजी प्राधिकरणों के विरुद्ध भी जारी की जा सकती है जब वे लोक कार्यों का निर्वहन कर रहे हों और जिस निर्णय को ठीक करने या लागू करने की माँग की जा रही है, वह लोक कार्य के निर्वहन में होना चाहिए। वर्तमान मामले में, शामिल मुद्दे और प्रश्न लोक कार्यों से संबंधित नहीं हैं।

4. इस स्तर पर, मैं *ए.आई.आर. 1958 एस.सी. 86 में प्रतिवेदित* ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद नूह*** मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का

उल्लेख करना चाहूँगा, जिसमें यह टिप्पणी की गई थी कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 का पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं होता है।

5. इस न्यायालय की एकल पीठ ने रिट याचिका (सिविल) सं. 5236/1997, जिसका शीर्षक ***बाल्को ऑफ़िसर्स एसोसिएशन एवं अन्य बनाम भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड एवं अन्य*** था, में प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा उठाई गई इसी प्रकार की प्रारंभिक आपत्ति को बरकरार रखते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की थी:-

> " प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने बताया कि इन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान भारत एल्युमीनियम कंपनी का निजीकरण कर दिया गया है, जिसमें सभी शेयर स्टेरलाइट इंडस्ट्रीज़ इंडिया लिमिटेड को अंतरित कर दिए गए हैं। परिणामस्वरूप यह अब इस न्यायालय के रिट क्षेत्राधिकार के अधीन नहीं है। इस कथन को ध्यान में रखते हुए और अभिलेख पर विचार करने के बाद, रिट याचिका का निपटान किया जाता है। हालाँकि, याचिकाकर्ता विधि के अनुसार किसी भी शिकायत के निवारण के लिए संबंधित विधिक मंच से संपर्क करने के लिए स्वतंत्र है।
>
> रिट याचिका और सभी लंबित आवेदनों का निपटान किया जाता है।"

6. बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ को भी रिट याचिका सं. 1461/2003, ***तरुण कुमार बनर्जी बनाम भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड***

और अन्य में इसी प्रारंभिक मुद्दे की परीक्षा करनी थी और उक्त रिट याचिका को निम्नानुसार खारिज कर दिया गया था: -

> "1. दोनों याचिकाएँ भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड के विरुद्ध दायर की गई थीं, जब याचिकाएँ दायर की गई थीं, तब यह भारत सरकार का उद्यम था। प्रत्यर्थी द्वारा हमें बताया गया है कि उन्होंने 22-3-1996 को एक शपथपत्र दायर किया था, जिसमें बताया गया था कि भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड का निजीकरण कर दिया गया है और 50% से अधिक शेयर स्टेरलिट इंडस्ट्रीज़ इंडिया लिमिटेड को अंतरित कर दिए गए हैं और इसके परिणामस्वरूप भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड एक राज्य नहीं है और इस न्यायालय के रिट अधिकार क्षेत्र के लिए अध्यधीन नहीं है।
>
> 2. इस प्रस्तुति को ध्यान में रखते हुए हम याचिकाकर्ता को अपनी शिकायत के निवारण के लिए किसी अन्य मंच से संपर्क करने की स्वतंत्रता देते हुए दोनों याचिकाओं का निपटान करते हैं। याचिकाकर्ता द्वारा इन कार्यवाहियों पर मुकदमा चलाने में बिताए गए समय को सीमा के उद्देश्य से ध्यान में रखा जाएगा यदि याचिकाकर्ता कोई ऐसा उपाय चुनता है जहाँ परिसीमा का प्रश्न प्रासंगिक होगा।
>
> (न्या. बिलाल नाज़की)
>
> (न्या. ए.पी. भंगाले)"

7. प्रत्यर्थी कंपनी के निजीकरण को बाल्को कर्मचारी संघ (पंजी.) ने उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी थी। चुनौती के लिए एक आधार यह था कि विनिवेश के बाद प्रत्यर्थी कंपनी एक निजी कंपनी बन जाएगी और इसलिए, रिट अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं होगी। उक्त चुनौती पर उच्चतम न्यायालय ने विचार किया और निम्नलिखित शब्दों में उसे अस्वीकार कर दिया:-

> **"47.** विनिवेश की प्रक्रिया एक नीतिगत निर्णय है जिसमें जटिल आर्थिक कारक शामिल होते हैं। न्यायालयों ने लगातार आर्थिक निर्णयों में हस्तक्षेप करने से परहेज किया है क्योंकि यह माना गया है कि आर्थिक लाभ में न्यायिक प्रवृत्ति का अभाव है और जब तक आर्थिक लाभ पर आधारित आर्थिक निर्णय संवैधानिक या विधिक सीमाओं का इतना उल्लंघन करने वाला या तर्क के प्रति इतना घृणित नहीं साबित होता है, तब तक न्यायालय हस्तक्षेप करने से मना कर देंगे। आर्थिक मुद्दों से संबंधित मामलों में, सरकार को निर्णय लेते समय "परीक्षण और त्रुटि" का अधिकार है, जब तक कि परीक्षण और त्रुटि दोनों ही वास्तविक हों और अधिकार की सीमाओं के भीतर हों। याचिकाकर्ता द्वारा ऐसा कोई मामला नहीं बनाया गया है कि बाल्को में विनिवेश का निर्णय किसी भी तरह से मनमाना, अवैध या बिना सूचना के लिया गया है। भले ही कर्मचारियों को कंपनी के कामकाज के तरीके में दिलचस्पी हो, क्योंकि उसके नीतिगत निर्णय का कर्मचारियों के अधिकारों पर असर हो सकता है, फिर भी नियोक्ता के उस निर्णय को स्वीकार करना कर्मचारी के लिए सेवा का दायित्व है जो ईमानदारी से लिया गया हो और जो विधि के विपरीत न हो। यहाँ तक कि एक सरकारी कर्मचारी को, जिसे न केवल संविधान के अनुच्छेद

14 और 16 बल्कि अनुच्छेद 311 का भी संरक्षण प्राप्त है, सेवा में बने रहने का कोई पूर्ण अधिकार नहीं है। उदाहरण के लिए, अनुशासनात्मक कार्रवाई के मामलों के अतिरिक्त, यदि पद समाप्त कर दिए जाते हैं तो सरकारी कर्मचारियों की सेवाएँ समाप्त की जा सकती हैं। यदि ऐसा कर्मचारी संविधान के भाग III या अनुच्छेद 311 के आधार पर शिकायत नहीं कर सकता है तो यह तर्क नहीं हो सकता कि याचीगण की तरह, एक कंपनी में काम करने वाले गैर-सरकारी कर्मचारी, जो न्यायिक घोषणा के कारण संविधान के भाग III के प्रयोजनों के लिए एक राज्य के रूप में माने जा सकते हैं, एक सरकारी कर्मचारी से बेहतर अधिकार का दावा कर सकते हैं और उसकी स्थिति में परिवर्तन को चुनौती दे सकते हैं। आर्थिक मामलों में नीतिगत निर्णय लेने में, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की कोई भूमिका नहीं होती है। हालाँकि एक जिम्मेदार नियोक्ता से यह अपेक्षा की जाती है कि वह कोई भी नीतिगत निर्णय लेने से पहले कर्मचारियों के कल्याण सहित सभी पहलुओं पर विचार करे, लेकिन यह अपने आप में कर्मचारियों को निर्णय लेने से पहले सुनवाई या परामर्श का अधिकार माँगने का हकदार नहीं बनाता है।

48. केवल इसलिए कि बाल्को को राज्य मानने से कामगारों को संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के अंतर्गत संरक्षण प्राप्त हो सकता है, इसका मतलब यह नहीं है कि पूर्ववर्ती एकमात्र शेयरधारक अर्थात् सरकार को विनिवेश का निर्णय करने से पहले कर्मचारियों को सुनवाई की पूर्व सूचना देनी होगी। नैसर्गिक न्याय का कोई सिद्धांत नहीं है जो उन लोगों को पूर्व सूचना और सुनवाई की आवश्यकता रखता है जो आम तौर पर सरकार के आर्थिक नीतिगत निर्णय से एक वर्ग के रूप में प्रभावित होते हैं। यदि नीतिगत निर्णय

> के अनुसार किसी पद को समाप्त करना संविधान के अनुच्छेद 311 के उपबंधों को आकर्षित नहीं करता है जैसा कि *हरियाणा राज्य बनाम देस राज संगर* में समान तर्क के आधार पर अभिनिर्धारित किया गया है, तो विनिवेश की नीति को गलत नहीं ठहराया जा सकता है यदि इसके परिणामस्वरूप कर्मचारी संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के अंतर्गत अपने अधिकार या सुरक्षा खो देते हैं। दूसरे शब्दों में, संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के अंतर्गत सुरक्षा के अधिकारों का अस्तित्व संभवतः विनिवेश के सरकार के अधिकार को वीटो करने का प्रभाव नहीं डाल सकता है। न ही कर्मचारी विनिवेश प्रक्रिया के विभिन्न चरणों में निरंतर परामर्श के अधिकार का दावा कर सकते हैं। यदि विनिवेश प्रक्रिया किसी विधि का उल्लंघन किए बिना पूरी हो जाती है, तो विनिवेश के परिणामस्वरूप सामान्य परिणाम सामने आएँगे।"

8. कुछ इसी तरह का अभिवाक् (2006) 10 एस.सी.सी. 66 में प्रतिवेदित ***ऑल इंडिया आईटीडीसी वर्कर्स यूनियन एवं अन्य बनाम आईटीडीसी एवं अन्य*** में भी दिया गया था, लेकिन ***बाल्को कर्मचारी संघ (पंजी.)*** मामले (पूर्वोक्त) में निर्णय के बाद, इस प्रतिविरोध को निम्नानुसार टिप्पणी करते हुए अस्वीकार कर दिया गया था: -

> **"23.** हमने संबंधित पक्षकारगण की ओर से उपस्थित संबंधित अधिवक्तागण द्वारा प्रस्तुत किए गए परस्पर विरोधी प्रस्तुतियों पर गहन विचार किया है। हमारी राय में, कर्मचारियों द्वारा दायर वर्तमान रिट याचिकाएँ खारिज किए जाने योग्य हैं क्योंकि विनिवेश भारत सरकार का नीतिगत निर्णय था। इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है

कि उक्त नीतिगत निर्णय में न्यायिक समीक्षा में कम से कम हस्तक्षेप किया जाना चाहिए और सरकारी कर्मचारियों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 21 और 311 के अंतर्गत कोई पूर्ण अधिकार नहीं है और सरकार स्वयं इस पद को समाप्त कर सकती है। वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता सरकारी कर्मचारी नहीं हैं और केवल एक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के कर्मचारी हैं। इसके अतिरिक्त, होटल के विनिवेश पर नए प्रबंधन के अंतर्गत याचीगण की सेवा शर्तों की रक्षा की जा रही है और यह तथ्य कि अन्य होटल भी होटल इकाइयों के विनिवेश के लिए भारत सरकार द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णय के अनुसरण में विनिवेश के उन्नत चरण में हैं। हमें उपरोक्त निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता। यदि अंततः याचीगण संदर्भ की शर्तों और अनुबंध के औपचारिककरण तथा विनिवेश के पूरा होने के किसी भी पहलू से असंतुष्ट हैं, तो याचीगण अपनी शिकायतों के निवारण के लिए न्यायालयों का दरवाज़ा खटखटाने के लिए सदैव स्वतंत्र हैं।

24. x x x x

25. x x x x

26. x x x x

27. यह भी ध्यान देने योग्य है कि आईटीडीसी ने विनिवेश प्रक्रिया में भाग नहीं लिया है क्योंकि यह प्रक्रिया भारत सरकार के विनिवेश मंत्रालय द्वारा की गई थी। कर्मचारियों की सेवा शर्तों के बारे में सुरक्षा उपाय अंतरण दस्तावेज़ अर्थात् निर्विलयन योजना और शेयर क्रय अनुबंध में विधिवत प्रदान किए गए हैं। इस न्यायालय ने *बाल्को कर्मचारी संघ (पंजी.) बनाम भारत संघ* में भी अभिनिर्धारित

किया कि भारतीय कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कंपनी के कर्मचारियों को राज्य के किसी साधन के कर्मचारी की स्थिति का आनंद लेना जारी रखने का कोई निहित अधिकार नहीं है।"

9. प्रत्येक व्यक्ति का यह अंतर्निहित अधिकार है कि वह सिविल प्रकृति का वाद दायर करे, जब तक कि उसे स्पष्ट रूप से या निहित रूप से वर्जित न किया गया हो। इसी तरह, जहाँ औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की पूर्व-आवश्यकताएँ पूरी होती हैं, वहाँ इस अधिनियम के अंतर्गत भी कार्यवाही शुरू की जा सकती है। इसलिए, याचिकाकर्ता को उपचारहीन नहीं छोड़ा जा सकता। परिसीमा अवधि के प्रश्न पर, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 14 सुरक्षा प्रदान करती है और जहाँ उक्त धारा की शर्तें पूरी होती हैं, वहाँ उस अवधि के लिए छूट दी जा सकती है, जिसके दौरान रिट याचिका लंबित रही थी। इस संबंध में ***तरुण कुमार बनर्जी*** (पूर्वोक्त) के मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की टिप्पणियों का संदर्भ लिया जा सकता है।

10. इन परिस्थितियों में, वर्तमान रिट याचिका मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना खारिज की जाती है, जिसमें प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति को बरकरार रखा गया है कि वह राज्य नहीं है और इसलिए रिट अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं है। हालाँकि, यह देखा गया है कि याचिकाकर्ता अपनी शिकायत के निवारण के लिए किसी भी मंच से संपर्क करने के लिए स्वतंत्र है, यदि ऐसा सलाह दी जाती है और इन कार्यवाहियों में उसके

द्वारा बिताया गया समय परिसीमा के उद्देश्य से ध्यान में रखा जाएगा। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, जुर्मानों के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(संजीव खन्ना)
न्यायाधीश

23 जुलाई, 2008
वीकेआर

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*